

जिसने बदली दिशा जगत् की,  
धरती और आकाश की ।  
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,  
जय सत्यार्थ प्रकाश की ॥

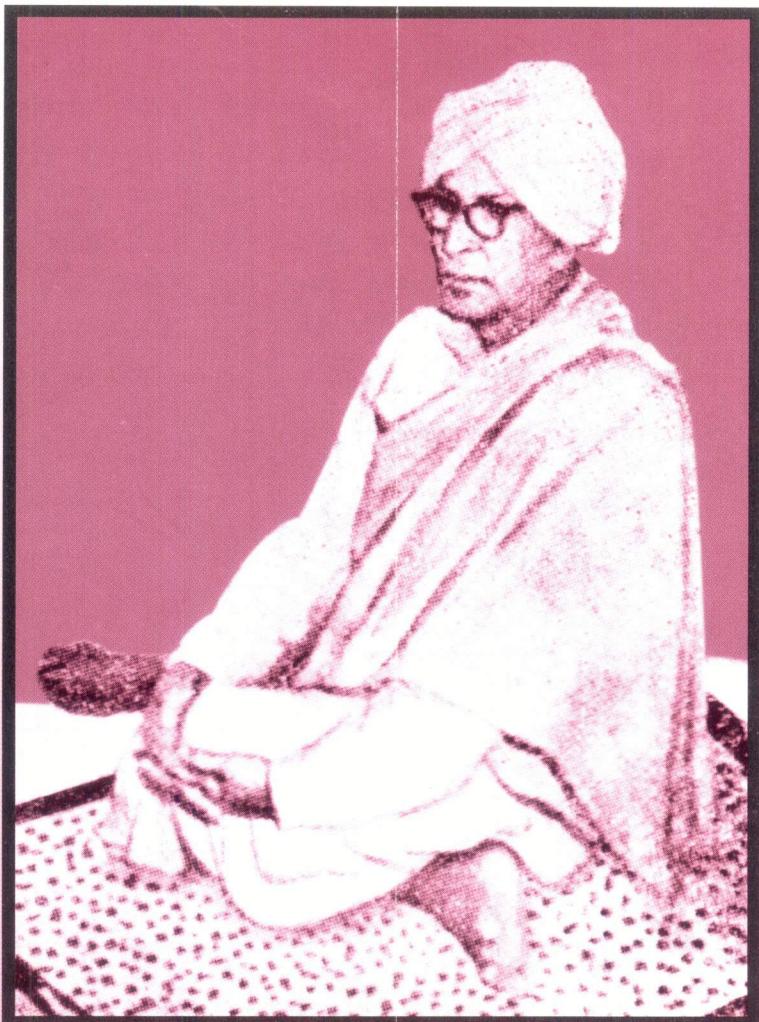
॥ ओ३म् ॥

वर्ष - ६० अंक - ०४  
मूल्य : एक प्रति १० रुपये  
वार्षिक : १००) रु०  
आजीवन - १०००) रु०  
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

# आर्य-संस्कार

चैत्र-वैशाख : सम्वत् २०७४ वि०

अप्रैल - २०१७



ठाकुर अमर सिंहजी आर्यपथिक

# आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

## होलिकोत्सव

बासन्ती नवसस्येष्टि पर्व (होलिकोत्सव) फाल्गुन पूर्णिमा सम्बत् २०७३ तदनुसार रविवार १२ मार्च २०१७ को सायं ५ बजे से आर्य समाज कलकत्ता में मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ यज्ञ के साथ हुआ। यज्ञ पं० आत्मानन्द शास्त्री एवं पं० देव नारायण तिवारी के पौरोहित्य में सम्पन्न हुआ। यज्ञ के उपरान्त एक सभा का आयोजन हुआ जिसमें वक्ताओं ने होली पर्व के वैदिक स्वरूप का वर्णन तथा इसके महत्व को रेखांकित किया। इस अवसर पर आर्य समाज बड़ाबाजार के वरिष्ठ सदस्य श्री खुशहाल चन्द आर्य, आर्य समाज बड़ाबाजार के मन्त्री श्री नरेश गुप्त के अतिरिक्त पं० आत्मानन्द शास्त्री, पं० देवनारायण तिवारी एवं आर्य समाज कलकत्ता के पूर्व मन्त्री श्री सत्यप्रकाश जायसवाल ने अपने-अपने विचार व्यक्त किये।

## नव वर्ष एवं आर्य समाज स्थापना दिवस

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सम्बत् २०७४ तदनुसार २९ मार्च २०१७ को आर्य समाज कलकत्ता के सभागार के नव वर्ष एवं आर्य समाज स्थापना दिवस सायं ६ बजे से आर्यसमाज कलकत्ता के सभागार में मनाया गया। कार्यक्रम का शुभारम्भ यज्ञ से हुआ। यज्ञ पं० आत्मानन्द शास्त्री, पं० देवनारायण तिवारी, पं० योगेशराज उपाध्याय एवं पं० देवव्रत तिवारी जी द्वारा सम्पन्न करवाया गया। यज्ञ के उपरान्त एक गोष्ठी का आयोजन हुआ। जिसमें पं० आत्मानन्द शास्त्री, पं० देवनारायण तिवारी, आर्य समाज कलकत्ता के पूर्व प्रधान श्री मनीराम आर्य एवं पं० देवव्रत तिवारी ने अपने-अपने विचार प्रस्तुत किये। कार्यक्रम का संचालन पं० योगेशराज उपाध्याय जी ने किया। इस अवसर पर श्री मनीराम आर्य जी ने कहा कि आज विद्वानों और अधिकारियों में सैद्धान्तिक स्खलन के कारण आर्य समाज के क्षेत्र में शिथिलता दृष्टिगोचर हो रही है जिसे दूर किया जाना आवश्यक है।

## आध्यात्मिक महिला सत्संग

### आर्य स्त्री समाज कलकत्ता का विशिष्ट कार्यक्रम

१९ अप्रैल से २३ अप्रैल २०१७

स्थान :- आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता-६

समय :- अपराह्न ३बजे से ५ बजे तक

सुश्री अञ्जलि आर्या (करनाल) के पावन सान्निध्य में

निवेदक :-

आर्य समाज कलकत्ता एवं आर्य स्त्री समाज कलकत्ता



ओ३म्

# आर्य-संसार

वर्ष ५९ अंक — ०४  
चैत्र-वैशाख २०७४ विं  
दयानन्दाब्द १९३  
सृष्टि सं० १,९६,०८,५३,११८  
अप्रैल — २०१७



आदा सम्पादक  
**प्रो० उमाकान्त उपाध्याय**  
(सृष्टि शेष)

●  
सम्पादक :  
**श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल**  
सहयोगी संपादक :  
**श्रीमती सरोजिनी शुक्ला**  
**श्री सत्यप्रकाश जायसवाल**  
पं० योगेशराज उपाध्याय  
●  
शुल्क : एक प्रति १० रुपये  
वार्षिक : १०० रुपये  
आजीवन : १००० रुपये

## इस अंक की प्रस्तुति

१. आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ	२
२. इस अंक की प्रस्तुति	३
३. मृत्यु विजय (५१) वेद-वीथिका से	४
४. स्वामी जी का स्वकथित जीवन-चरित्र पं० लेखराम द्वारा संकलित	७
५. ठाकुर अमर सिंहजी आर्यपथिक	१०
६. वायरल-वैक्टरियल एवं संक्रमित रोगों की रोकथाम में आयुर्वेदिक यज्ञथैरेपी का वैज्ञानिक चिन्तन	१२
७. उन्नति सत्येन्द्र सिंह आर्य	१८
८. क्रान्तिकारी महर्षि दयानन्द सरस्वती श्री राधे मोहन	२०
९. सत्यार्थ प्रकाश काव्य सुधा पं० देवनारायण तिवारी 'निर्भक'	२३
महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश का काव्यानुवाद	
१०. हिंदी द्वारा सारे भारत को एकसूत्र परीक्षित मंडल 'प्रेमी' में पिरोया जा सकता है	२७

## आर्य समाज कलकत्ता

१९, विद्यान सरणी, कोलकाता-७०० ००६

द्वारभाषः २२४१-३४३९

email : aryasamajkolkata@gmail.com

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उन्नरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है।

किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा।

## मृत्युविजय

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघत ।  
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत् ॥

अथर्व० ११-५-१९

**शब्दार्थ :-**

ब्रह्मचर्येण	= ब्रह्मचर्य से (महान् आचरण)	तपसा	= तप से (स्व कर्म वर्तित्वम्)
देवा	= देवों ने	मृत्युम्	= मृत्यु को
अपाघत	= मार डाला	इन्द्रः	= आत्मा (ऐश्वर्यवान्)
ह	= निश्चय ही	ब्रह्मचर्येण	= ब्रह्मचर्य से
देवेभ्यः	= देवों के लिए (इन्द्रियों को)	स्वः	= सुख, आनन्द
आभरत्	= भर दिया		

**भावार्थ :-** -देवों ने ब्रह्मचर्य रूपी तप से मृत्यु को मार डाला । ब्रह्मचर्य के द्वारा आत्मा ने देवों के लिए सुख भर दिया ।

**विचार विन्दु :**

- १. ब्रह्मचर्य का अर्थ-व्यापक अवधारणा ।
- २. मृत्यु की मृत्यु का भाव और उपाय ।
- ३. इन्द्र कौन है ?
- ४. देवों को सुखी करने का अभिप्राय ।

### व्याख्या

वेद के उपदेशों में ‘ब्रह्मचर्य’ की महिमा का अद्भुत वर्णन है । अथर्व वेद में ब्रह्मचर्य महिमा, पर एक पृथक् सूक्त है ।

इस मंत्र में ब्रह्मचर्य की महिमा गायी गई है । मंत्र कहता है कि ब्रह्मचर्य रूपी तप से देवताओं ने मृत्यु को मार गिराया । वस्तुतः ब्रह्मचर्य की अवधारणा भारतीय मनीषा की अद्भुत देन है । संसार की किसी अन्य संस्कृति में ब्रह्मचर्य पर इतना जोर नहीं दिया गया है । आखिर यह ब्रह्मचर्य है क्या ? सारा संसार मृत्यु से डरता है । कहते भी हैं-‘जगत् चबैना काल का कुछ मुख में कुछ गोद ।’ लोगों को डर लगा रहता है कि कहीं मृत्यु न आ जाये । किन्तु इस मंत्र

में बात कुछ उल्टी ही कही गई है कि देवताओं ने ब्रह्मचर्य रूपी तप के द्वारा मृत्यु को ही मार दिया है। प्रश्न यह है ब्रह्मचर्य की अवधारणा क्या है? वस्तुतः ब्रह्मचर्य का अर्थ होता है- ब्रह्मणि-चरणम् ब्रह्मचर्यम्, ब्रह्म में विचरण करना। ब्रह्म के कई अर्थ हैं - (१) ब्रह्म = ज्ञान (२) ब्रह्म = वेद (३) ब्रह्म = परमेश्वर (४) ब्रह्म = बृहत्। इस प्रकार ब्रह्मचर्य का चार अर्थ बना। (१) ज्ञान और विद्या में विचरण करना (२) वेद के पठन-पाठन, अध्ययन अध्यापन में अपने को लगा दें (३) परमेश्वर के चिन्तन, मनन और गुणगान में विचरण करें। (४) किसी महान् वृहद् कार्य में लगना। संसार में ब्रह्मचर्य का सीधा अर्थ है अपनी इन्द्रियों पर संयम रखना। इसलिए ब्रह्मचर्य का मोटा अर्थ है-इन्द्रियों पर संयम, सो भी उपस्थ, जननेद्रिय का संयम।

जो व्यक्ति ज्ञान, वेद या परमेश्वर के चिन्तन में तत्पर नहीं रहेगा वह अवश्य ही विषयों के चिन्तन में लगा रहेगा। जो विषयों के चिन्तन में लगा रहेगा वह विषयचारी होगा, ब्रह्मचारी नहीं होगा। विषयचारी का कैसे सत्यानाश होता है इसका बहुत सुन्दर विश्लेषण भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में किया है। योगेश्वर कृष्ण कहते हैं कि जो विद्या, वेद, परमेश्वर संसार का कल्याण या और दूसरी अच्छी वस्तुओं में ध्यान नहीं लगायेगा उसका ध्यान इन्द्रियों के विषयों में चला जायेगा। जो विषयों का ध्यान करेगा वह मानसिक रूप से उन विषयों के सम्पर्क में आ जायेगा और विषयों को सोचते-सोचते उसे मोह भी हो जायेगा। जिसका मोह बढ़ेगा उसकी स्मृति और बुद्धि नष्ट हो जाती है और जब बुद्धि ही नष्ट हो गई तो मनुष्य के सर्वनाश में विलम्ब नहीं होता।

श्री कृष्ण कहते हैं -

ध्यायतो विषयान् पुंसः, संगस्तेषु पजायते  
संगात्संजायते-कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते ।  
क्रोधाद् भवति सम्पोहः संपोहात्स्मृतिविभ्रमः ।  
स्मृतिभूंशाद् बुद्धिनाशो, बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥

गीता - २-६ २-६ ३

ऋषियों ने कहा है कि दीर्घ जीवन के लिए जीवन में तपस्या होनी चाहिए और जो तप करेगा वह विषयचारी नहीं होगा। तप है अपने कर्तव्य कर्म में सावधानी से तत्पर रहना।

जो इन्द्रियों के रस में लग गया वह अब कोई अच्छा बड़ा, महान् कार्य, कोई आदर्श कार्य अपना कर्तव्य नहीं कर सकता। हमारी विषय-सेवी इन्द्रियां हैं - हम रसना से रस लेते हैं, आंख से रूप देखते हैं, नाक से गन्ध लेते हैं, कान से शब्द सुनते हैं और त्वचा से स्पर्श का सुख लेते हैं। जो भोगों को भोगने में लगा वह भोगी होगा और वह निश्चित ही रोगी होगा-'भोगे रोग भयम्' जो भोगों पर संयम कर लेगा उसे रोगी होने का अवसर कम है। भर्तृहरि जी कहते हैं कि - 'भोगा न भुक्ताः, क्यमेव भुक्ताः'। हम चले थे भोगों को भोगने के लिए पर भोगों ने हमें ही भोग डाला।

अतः जो भोगी होते हैं, वे ब्रह्मचारी नहीं होते और वे रोग से मरते हैं और जो ब्रह्मचारी होते हैं, वे योगी होते हैं ।

मंत्र में कहा है कि देवो ने ब्रह्मचर्य के द्वारा मृत्यु को मार दिया । अब एक प्रश्न है कि मृत्यु की, मृत्यु क्या है ? या देवताओं ने मृत्यु को कैसे मार दिया ? एक मृत्यु होती है—रोग से और दूसरी मृत्यु होती है योग से, शरीर से पृथक हो जाना । पुरानी मर्यादा यही थी कि लोग अन्त में योग के सहरे मृत्यु से ऊपर उठकर शरीर से मुक्त होते थे और परम पद प्राप्त कर लेते थे ।

जो अल्पायु में मरते हैं, उन्हें मृत्यु मारती है । जो रोग से मरते हैं, उन्हें मृत्यु मारती है । जो पूर्णायु दीर्घायु पाकर मरते हैं, वे मृत्यु को पराजित करके परजन्म में उन्नत योनि में जाने के लिए मृत्यु को साधन बना लेते हैं । यही है ‘मृत्यु को मारना ।’

अगली बात मंत्र में यह कही गई है कि इन्द्र ने देवों को ब्रह्मचर्य के द्वारा सुख से भर दिया । यहां इन्द्र है जीवात्मा और देव हैं - इन्द्रियां । आत्मा जब साधना करता है और अपनी भोग इन्द्रियों को संयम में रख कर आगे बढ़ता है तो इन्द्रियों को अपूर्व आनन्द आता है । विचार करते हैं—कैसे ? इन्द्रियों के द्वारा भोगा जाने वाला कोई भी ऐसा इन्द्रिय सुख नहीं हैं जो क्षण-भंगुर न हो । भोजन से रसना को तृप्ति मिलती है, किन्तु कितनी देर के लिए ? आंखों से रूप का सुख मिलता है परन्तु यह सारे विषय-सुख सदा आत्मा के साथ नहीं रहते । किन्तु जब आत्मा ज्ञान, विद्या, परमेश्वर में सुख पाने लगता हैं तो इन्द्रियों के सुख क्षणिक और गौण हो जाते हैं । काव्य का सुख ब्रह्मानन्द सहोदर कहलाता है । ज्ञान का सुख तो ही ब्रह्मानन्द । वेद में कहा है कि -‘रसोवै सः’ । भगवान् सबसे बड़ा सुख देने वाले हैं और यह सुख आत्मा परमेश्वर में विचरण करके प्राप्त करता है । इसी प्रकार किसी महान् बृहत् परोपकारी कार्य में समर्पित हो जाना भी ‘ब्रह्मणि चरणम्-ब्रह्मचर्यम्’ है । ऐसे महान् कार्यों के जो अर्पित हो जाते हैं, वे भी ब्रह्मचारी हैं, वे भी महान् आनन्द में रहते हैं ।

### सुधी विद्वान् लेखकों से विनम्र निवेदन

‘आर्य संसार’ मासिक पत्र विगत ६० वर्षों से आर्यसमाज कलकत्ता एवं पूर्वज्वल की आर्य समाज की गतिविधियों के साथ विभिन्न लेखकों के लेख, निबन्ध, शोध ग्रन्थ एवं अनुपलब्ध सामग्री के साथ अनवरत प्रकाशित हो रहा है । इसके आद्य सम्पादक स्व० उमाकान्त उपाध्याय जी के उपरान्त विद्वानों एवं लेखकों से हमारा सीधा सम्पर्क नहीं रहा ।

विद्वानों एवं अनुभवी लेखकों से निवेदन है कि अपने मौलिक एवं शोधपूर्ण लेख प्रकाशनार्थ हमें उपलब्ध कराकर हमारा सम्बल बनें । प्रकाशित लेख की प्रति डाक द्वारा प्रेषित की जायेगी ।

सम्पादक — राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल

# महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जीवन वृत्त

अध्याय-१

जयपुर नगर में

(लगभग मध्य अक्टूबर १८६५ से ३ मार्च, १८६६ तक)

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी को गुजरात में संवत् १८८१ में हुआ था। पूरे भारतवर्ष में स्वामी जी का जन्म दिवस मनाया जाता है इसी अवसर पर आर्य समाज कलकत्ता ने निर्णय किया कि पं० लेखराम द्वारा संकलित एवं आर्य महामहोपदेशक कविराज श्री रघुनन्दन सिंह निर्मल द्वारा अनूदित महर्षि स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र धारावाहिक प्रकाशित किया जाय, इसी श्रृंखला में प्रस्तुत है यह धारावाहिक जीवन-चरित्र — सम्पादक

(गतांक से आगे)

**गायत्री मन्त्र के जाप का उपदेश** — जयपुर में उस समय किसी रईस से उनकी जान पहचान न थी। इसी कारण रामकुमार नन्दराम मोदी के बगीचे में निवास किया था। उस समय उनके साथ तीन ब्राह्मण थे—एक सच्चिदानन्द, दूसरा चेतनराम और तीसरे को ब्रह्मचारी के नाम से पुकारते थे। ये तीनों पढ़े-लिखे थे और केवल स्वामी जी के सत्संग और सेवा के निमित्त ही साथ रहते थे। इनमें से सच्चिदानन्द को स्वामी जी ने ईश्वर की उपासना का मनोपदेश दिया हुआ था जिससे वह सायंकाल सूर्य के समुख खड़ा होकर उसका जप किया करता था (वह मन्त्र गायत्री था)।

**विद्वान् स्वामी जी की विद्वता से प्रभावित** — एक गोपालानन्द परमहंस जो घाट में रहते थे, उसने जीव-ब्रह्म के विषय में पत्र द्वारा कुछ प्रश्न किये। उनके उत्तर स्वामी जी ने बड़ी योग्यता के साथ लिखकर भेज दिये। उन प्रश्नों के उत्तर पढ़कर गोपालानन्द ऐसे प्रसन्न हुए कि घाट का निवास त्याग कर स्वामी जी के पास उसी बाग में आ ठहरे और प्रतिदिन प्रश्नोत्तर द्वारा अपने चित्त को स्थिर करने लगे।

“मैं अपनी सम्मति के अनुकूल ही कहूँगा, तुम्हारे मन्दिर में रहने का मुझे कोई लिहाज नहीं होगा” स्वामी जी की वाग्मिता से लाभ उठाने की इच्छा वाले मन्दिर-पुजारी को स्पष्ट कथन — इसके पश्चात् श्रवणनाथ जी के शिष्य लक्ष्मणनाथ जी (जिनको महाराज रामसिंह जी जोधपुर से लाये थे) के साथ स्वामी जी महाराज का ब्रजनन्द जी के मन्दिर में किसी विषय पर सम्भाषण हुआ। लक्ष्मणनाथ जी ने स्वामी जी को शास्त्रव्युत्पन्न और योग्य समझ कर निवेदन किया कि आप कृपा करके इसी मन्दिर में रहिए और सम्प्रदायी लोगों के शास्त्रार्थ में हमको सहायता दीजिए। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि यदि शास्त्रार्थ में मुझको भी मिलाया जायेगा तो मैं भी अपनी सम्मति के अनुकूल कथन करूँगा — यहां

रहने पर कुछ बात (निर्भर) नहीं है। यह कहकर स्वामी जी अपने निवास स्थान को पधार गये।

**व्याकरण के दस या पन्द्रह प्रश्न, पंडित उन पर लिखित शास्त्रार्थ करने के लिए तैयार नहीं हुए-**  
इसके पश्चात् स्वामी जी ने व्याकरण के दश या पन्द्रह प्रश्न लिखकर जयपुर की पाठशाला में पंडितों के पास भेजे। पंडित महाशयों ने उन प्रश्नों के उत्तर में अनेक प्रकार के असभ्य शब्द लिख भेजे स्वामी जी ने उन पंडितों के लेख में आठ प्रकार के दोष निकाल कर पंडितों के पास फिर पत्र भेजा। उस पत्र को पढ़कर हरिशचन्द्र आदि सम्पूर्ण पंडितों ने अपने चित्त में अत्यन्त क्षोभ माना और उस पत्र का कुछ भी उत्तर नहीं दिया।

**पंडित शिवदत्त जी दायमा ब्राह्मण** ने, जो संस्कृत में अच्छे योग्य हैं, बताया कि उन प्रश्नों में से केवल दो प्रश्न स्मरण हैं, शेष नहीं।

१. कल्म च किं भवति ।

२. येन कर्मणा सर्वे धातवः सकर्मकाः, किं तत्कर्म ?

प्रत्युत्तर देना स्वामी जी को तो कुछ कठिन न था परन्तु सब पण्डित एकत्र होकर व्यास बरखीराम जी के समीप गये कि आप उस पुरुष को महलों में बुलवाकर हमारा शास्त्रार्थ कराइयेगा। तब व्यास जी ने पंडितों के कहने के अनुसार स्वामी जी महाराज को महलों में बुलवाया और सब पंडितों को भी। स्वामी जी महलों में पधार कर राजराजेश्वरी जी के मन्दिर में सुशोभित हुए और सम्पूर्ण राजपंडित भी इकट्ठे हुए। इनमें से एक पंडित ने सबका मुखिया बनकर स्वामी जी महाराज से पूछा कि ये पन्द्रह प्रश्न और उनके उत्तर में यह आठ प्रकार के दोष आप ही ने लिखे हैं ? स्वामी जी ने उत्तर दिया कि हाँ यह मेरा ही लेख है। तब उसी प्रमुख पंडित ने उन शब्दों में से कल्म शब्द की व्याख्या की। जब वह अपना कथन समाप्त कर चुका तब स्वामी जी ने उसका खंडन करना आरम्भ किया। जब पूर्ण खंडन कर चुके तब पंडित लोग कुछ भी न कह सके। उनसे केवल यही कहते बना कि यदि यह व्याख्या ठीक नहीं, तो आप कथन कीजियेंगा। इस पर स्वामी जी ने कहा कि मेरा और आपका सम्पूर्ण कथन लिखा जावे तो उत्तम हो क्योंकि लेख के पश्चात् कोई अस्वीकार नहीं कर सकता। इस पर पंडितों ने बहुत हठ किया कि लिखने की कुछ आवश्यकता नहीं है। अन्त में बहुत विवाद के पश्चात् भी पंडितों ने लिखित शास्त्रार्थ को स्वीकार न किया।

**पंडितों ने कहा 'महाभाष्य व्याकरण में नहीं गिना जाता,' स्वामी जी के आग्रह पर भी यह वाक्य लिख कर नहीं दिया :-** तब स्वामी जी ने अपनी विद्यासम्बन्धी योग्यता को प्रकट करने के लिए, बिना लेख के ही कथन करना आरम्भ किया और अत्यन्त दृढ़ता के साथ कथन करके मौन हो गये। इसी कथन को श्रवण करके, एक मैथिल ओङ्गा जो पंडितों में नामी गिना जाता था, बोला कि यह अर्थ कहाँ पर लिखा है ? स्वामी जी ने कहा कि सम्पूर्ण शब्दों की व्याख्या किसी एक पुस्तक में लिखी हुई नहीं है परन्तु यह मेरा सारा कथन निस्सन्देह महाभाष्य के अनुकूल है। इस पर ओङ्गा जी बोले कि महाभाष्य की व्याकरण में गणना नहीं है। इस पर स्वामी जी ने बड़े शोक के साथ कहा कि क्या

महाभाष्य की व्याकरण में गणना नहीं है, आप लोगों का ऐसा ही स्मरण है, परन्तु इतना तो अवश्य लिख दीजिये कि महाभाष्य की व्याकरण में गणना नहीं है और इस पर सभा के हस्ताक्षर करा दीजिये। इतना कहने पर सम्पूर्ण पंडित लज्जित हो गये और उनके उस कथन के उत्तर में कुछ भी न बोले। इस समय व्यास जी ने मुन्नालाल जी से कहा कि अब सभा विसर्जन करो, नहीं तो निरुत्तर होना पड़ेगा। इस पर सहमत हो कर मुन्नालाल जी शीघ्र ही बोल उठे कि स्वामी जी महाराज ! अब नगर के द्वार बन्द होने वाले हैं और आपको बाहर पधारना है, इस कारण आप इस विषय को बन्द कीजिये। स्वामी जी ने कहा कि कुछ चिन्ता की बात नहीं है, केवल इतना ही लिखकर हस्ताक्षर करना है कि महाभाष्य की व्याकरण में गणना नहीं है, सभा विसर्जित हो जायेगी, आगे कल को विचार किया जायेगा। इतने में सम्पूर्ण लोग खड़े हो गये। तब स्वामी जी ने भी बड़े शोक के साथ कहा कि खेद है, उस सभा को सभा नहीं कहना चाहिए जो निरुत्तर होने के समय उठ भागे और ऐसे पुरुषों को पंडित कहना योग्य नहीं जो महाभाष्य की व्याकरण में गणना न करें। इतना कहकर स्वामी जी निवासस्थान को पधार गये और सभा विसर्जित हो गई।

**जैन यति प्रश्न लेकर मौन रह गये –** इस शास्त्रार्थ का समाचार सुनकर ओसवाल वैश्यों के गुरु जती श्री पूज्य जी ने स्वामी जी के पास दूत भेजकर कहलाया कि आप मेरे से कुछ वार्ता-विलास करें तो उत्तम होवे। इस पर स्वामी जी ने उत्तर दिया कि बड़े आनन्द की बात है, जब वे उचित समझे तभी मेरे पास चले आवें। इसपर जती जी ने फिर कहला भेजा कि हमारा आना नहीं हो सकेगा क्योंकि दूसरे के घर पर जाने से हमारे सेवकों में हमारे मान में फर्क आता है। इस कारण समयानुकूल आपसे किसी बाग या और किसी अन्य स्थान पर मेल हो जावे तो उत्तम है। इस पर स्वामी जी ने कहा कि अच्छा जब मिलाप होगा तभी सही, इतने में कुछ पत्र द्वारा ही वार्ता कीजिये। इस पर पूर्वोक्त पन्द्रह प्रश्न व्याकरणविषय के लिखकर जती जी के पास भेजे कि आप इनका उत्तर लिखियेगा। इन प्रश्नों को देखकर जती जी ने कुछ भी उत्तर नहीं लिखा किन्तु जैनमत के अनुकूल आठ प्रश्न लिखकर स्वामी जी के पास भेजे जिनके यथायोग्य उत्तर स्वामी जी ने बुद्धि पूर्वक लिखकर भेज दिये और केवल उत्तर ही नहीं लिखे प्रत्युत जैनधर्म पर आठ प्रश्न नये लिखकर भी भेजे जिनका उत्तर जती जी ने कुछ भी नहीं दिया।

क्रमशः.....

#### (पृष्ठ २७ का शेषांश)

आधुनिक काल तक संपूर्ण भारतीय मानवेतिहास की राष्ट्रीय और सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक अभ्युदय — भावना को अनवरत अनुप्राणित करने वाली अपूर्व क्षमता का वाग्विनियोग का निवेशन हुआ है।

**वेदसदन अमरपुर**

पो०-पथरा, जिला-गोड्डा

ज्ञारखण्ड-८१४१३३

## ठाकुर अमर सिंहजी आर्यपथिक

ठाकुर अमर सिंह जी आर्यपथिक सन् १९५८ ई० से सन् १९६१ ई० तक कलकत्ता में रहे। आर्यसमाज कलकत्ता अपने प्रचार-प्रसार एवं आंचलिक सभाओं में प्रचार की दृष्टि से प्रायः बाहर से ख्यातिप्राप्त विद्वानों को बुलाया करता है। यह काम बहुत दिनों से चला आ रहा है। इसी क्रम में लोकनाथ तर्कवाचस्पति, श्री मुनीश्वर देवजी, शास्त्रार्थ महारथी ओमप्रकाश शास्त्री, पं० वाचस्पति शास्त्री, पं० हरिदत्त शास्त्री, पं० मदनमोहन विद्यासागर इत्यादि विद्वानों को बुलाया गया था। ये विद्वान् अपनी सुविधा और समाज की योजना के अनुसार २-३ मास और कभी ३-४ मास भी प्रचार के कार्य को अग्रसर करने के लिए आर्यसमाज कलकत्ता में रह जाते थे। इसी प्रकार के पुरोगम में कुछ अधिक स्थायित्व के साथ ठाकुर अमर सिंहजी आर्यपथिक को सन् सन् १९५८ ई० में कलकत्ता बुलाया गया। ये सन् १९६१ ई० तक यहां रहे। काल की दृष्टि से चाहे यह अवधि बहुत लम्बी अवधि न हो, किन्तु कार्य की दृष्टि से इतना महत्वपूर्ण अवश्य है कि आर्यसमाज कलकत्ता के इतिहास में इसका अपना स्थान है।

ठाकुर अमर सिंहजी का जन्म अरनिया, बुलन्दशहर (उ० प्र०) में चैत्र शुक्ला १ संवत् १९५१ विक्रमी को हुआ था। इनके पिताजी का नाम ठाकुर टीकम सिंहजी चौहान था। कुछ दिन संस्कृत पाठशाला खुर्जा, बुलन्दशहर में संस्कृत की शिक्षा प्राप्त करके आर्य मुसाफिर विद्यालय आगरा में अध्ययनार्थ आ गये। सन् १९१४ ई० से सन् १९१८ ई० तक संस्कृत, फारसी अरबी आदि की शिक्षा प्राप्त कर सन् १९१८ ई० में आर्य मुसाफिर विद्यालय, आगरा के स्नातक बने। यहां से आपने आर्यपथिक उपनाम धारण किया। उपदेशक बनने के साथ ही ठाकुरजी ने धौलपुर, राजस्थान में आर्यसमाज के लिए सत्याग्रह किया। धौलपुर के वजीर आला अजीजुद्दीन ने धौलपुर का आर्यसमाज मन्दिर गिरवा दिया था। जिस जर्त्ये में ठाकुरजी गये थे, उसमें पण्डित बिहारीलालजी शास्त्री, श्री महेशप्रसाद जी अरबीफाजिल, श्री केदारनाथजी पाण्डेय (जो पीछे राहुल सांकृत्यायन के नाम से विख्यात हुए), पण्डित रामचन्द्रजी देहलवी आदि विद्वान् सम्मिलित थे।

सन् १९१८ ई० में ही महात्मा हंसराजजी ने इन्हें लाहौर बुलाकर उपदेशक नियुक्त किया। ठाकुर अमर सिंहजी तबसे आर्यसमाज के प्रचार में लगे हुए हैं। पंजाब से बंगाल तक सारा भारतवर्ष इनका प्रचार-क्षेत्र रहा है। ठाकुर अमर सिंहजी सफल उपदेशक, समझदार संगठनकर्ता और अति व्युत्पन्न शास्त्रार्थी हैं। शास्त्रार्थ-पटुता के कारण ही आप शास्त्रार्थ महारथी कहलाते हैं। ठाकुर अमर सिंहजी ने पं० कालूराम, कविरत्न अखिलानन्दजी, पं० माधवाचार्यजी, जगन्नाथपुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजनदेवजी तीर्थ आदि पौराणिक विद्वानों से शास्त्रार्थ किया और विजय प्राप्त की। जैनियों से भी आपके शास्त्रार्थ हुए। ईसाईयों से, मुसलमानों से, अहमदियों से आपने सैकड़ों शास्त्रार्थ किये हैं। पादरी अब्दुलहक मन्तकी, पादरी एच०एस० पाल, मौलाना सनातल्ला, मौलाना फजल मुहम्मद शर्मा, मौलाना हाफिज रौशनअली, अब्दुल हक विद्यार्थी आदि विरोधियों से शास्त्रार्थ किया और वैदिक धर्म की विजय-वैजयन्ती लहराते रहे। शास्त्रार्थकर्ता होने के साथ ही श्री अमर सिंहजी इतिहास और प्रमाणों

के भी बड़े अन्वेषणकर्ता हैं। आर्य सिद्धान्तसागर नामक ग्रन्थ में आपने वैदिक सिद्धान्तों के समर्थन में ३,००० प्रमाण संकलित किये हैं। इनकी लिखी पुस्तकें कुछ इस प्रकार हैं :—

- (१) आर्य सिद्धान्त सागर,
- (२) जीवित पितर,
- (३) हनुमान आदि बानर, बन्दर थे या मनुष्य,
- (४) कौन कहता है कि द्रौपदी के पांच पति थे,
- (५) रामायण दर्पण,
- (६) क्या रावण-वध विजयदशमी को हुआ था,
- (७) गीता में ईश्वर का स्वरूप,
- (८) गीता और महर्षि दयानन्द,
- (९) गीता और वेद,
- (१०) गीता और अवतारवाद,
- (११) शिवाजी का पत्र महाराजा जयसिंह के नाम,
- (१२) कल्ल इन्सान पर वेद और कुरान,
- (१३) मूर्तिपूजा और शंकराचार्य,
- (१४) भारतीयकरण (शुद्धि),
- (१५) यज्ञ में पशुवध अधर्म है,
- (१६) निर्णय के तट पर (अनेकों शास्त्रार्थों का संग्रह)

श्री ठाकुरजी ने और भी बहुत-सा साहित्य निर्माण किया, जो अप्रकाशित है।

कलकत्ता प्रवास-काल में ठाकुर अमर सिंहजी की मिशनरी बुद्धि ने एक ऐसे परमार्थी कार्य का आरम्भ कर दिया, जिसके नाम के साथ ठाकुरजी का नाम सदा जुड़ा रहेगा। सन् १९५६ ई० में ठाकुर अमर सिंहजी ने कलकत्ता आर्यसमाज में महर्षि दयानन्द धर्मार्थ औषधालय स्थापित किया। स्वयं ही दवाइयाँ बनाते, रोगियों को देखते और औषधालय के रूप में जनसेवा का कार्य करते रहते। उस समय आर्यसमाज कलकत्ता के कार्यालयाध्यक्ष श्री दिनेशचन्द्रजी वैद्य स्वयं बड़े कुशल वैद्य थे और इस प्रकार दोनों वैद्यों की सहायता एवं सहयोग से महर्षि दयानन्द धर्मार्थ औषधालय का कार्य सुचारू रूप से चल निकला। यह औषधालय आज भी कलकत्ता के जनसेवा विभाग का एक महत्वपूर्ण अंग है और इस औषधालय से अच्छी बड़ी संख्या में रोगियों को लाभ मिल रहा है। ठाकुर अमर सिंहजी ने चैत्र शुक्ल प्रतिपदा संवत् २०२४ विक्रमी को संन्यास की दीक्षा ले ली और अब श्री अमर स्वामी सरस्वती के नाम से प्रसिद्ध हैं। ९० वर्ष से अधिक की आयु हो गयी है और शरीर अति जीर्ण हो गया है, किन्तु मस्तिष्क आज भी बड़ा बलवान है। उपदेश, लेख आज भी देते रहते हैं। इस वृद्धावस्था में भी अमर वेद ज्योति नामक मासिक पत्र के सम्पादक हैं। आजकल वेद-मन्दिर, विवेकानन्द नगर, गाजियावाद में रहते हैं।

# वायरल-वैकटेरियल एवं संक्रमित रोगों की रोकथाम में आयुर्वेदिक यज्ञथैरेपी का वैज्ञानिक चिन्तन

लेखक -आचार्य (डा०) श्वेतकेतु शर्मा

## प्रस्तावना

आज चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में असाधारण प्रगति, देश के विभिन्न घातक रोगों के उन्मूलन, के सरकारी दावे एवं भूकम्प बाढ़ जैसी आपदाओं के सम्बावित दुष्परिणामों को निस्तेज करने सम्बन्धी हमारे योजनाकारों की दलीलों के बावजूद देश में प्लेग, तपेदिक, कोढ़, स्वान फ्लू, डेंगू, मलेरिया, वायरल फीवर, एड्स, हृदय रोग, चर्मरोग, गुर्दा रोग आदि ने भी न केवल देश में अपनी उपस्थिति का एहसास करा दिया है, बल्कि अपने निरन्तर प्रसार एवं अब तक रोकथाम की कारगर औषधियों के अभाव में सम्पूर्ण विश्व को ही सकते में डाल दिया है।

किसी भी बीमारी के पीछे एक हद तक गन्दगी, गरीबी, आबादी और औद्योगिकीकरण, वैभव, विलासित अदूरदर्शी योजनायें और अव्यवहारिक नीतियां एवं इन रोगों से जूझने हेतु आपसी सामंजस्य और दृढ़ इच्छा शक्ति के अभाव जैसे कारण जिम्मेदार माने जाते हैं। इन रोगों के बढ़ते कदमों को रोकना असंभव लग रहा है, परन्तु इसके प्रसार को कम करने के कई ऐसे सहज वैज्ञानिक आयुर्वेदीय उपाय हैं, जिसके सहारे इनसे एक हद तक बच पाना संभव है। इसके विस्तार क्रम को देखते हुए कहा जा सकता है कि रोकथाम के व्यावहारिक एवं वैज्ञानिक ऋषि मुनियों के त्वरित उपाय के अभाव में यह भविष्य में मानव समुदाय के लिये एक गम्भीर चुनौती खड़ी कर सकती है।

ऋषि मुनियों का कहलाने वाला यह देश अपनी संस्कृति, सभ्यता व चिकित्सा को भूलते इन विभिन्न बीमारियों के दुष्परिणामों का शिकार हो रहा है।

वेदों के परिप्रेक्ष्य में यज्ञ और योग यह दोनों शब्द वैदिक कर्मकाण्ड, पर्वों, संस्कारों, लोकाचारों व नित्यकर्मों में यज्ञ को प्रधान माना जाता है, पर यह विडम्बना है कि यज्ञ जैसे व्यापक शब्द को उस कर्मकाण्ड तक सीमित कर दिया गया है, जहाँ यज्ञमान द्वारा अग्नि का आधान किया जाता है, धृत से अग्नि को वर्धन किया जाता है, उसके पश्चात हवि पदार्थों से अग्नि में आहूतियां डाली जाती हैं। यह प्रक्रिया सामान्य अग्निहोत्र से लेकर बड़े-बड़े यज्ञ व शुभ अवसरों पर यह विद्या सम्पन्न होती है। इस प्रकार यज्ञ को वर्तमान में कर्मकाण्ड का प्रतीक ही माना जा रहा है और कर्मकाण्ड का प्रतीक बनाकर रूढ़िवादिता से जोड़ा जा रहा है तथा टोना टुटका व जादूई मंत्रों के रूप में प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया।

वेदों के इस चिकित्सा विज्ञान को कर्म काण्ड की परिधि से बाहर निकालने और उसका वास्तविक स्वरूप सर्व साधारण के मध्य रखने का श्रेय नवजागरण के पुरोधा महर्षि दयानन्द सरस्वती जी को जाता है, जिन्होंने सर्वप्रथम उद्घोषित किया था कि वेद सर्व सत्य विद्याओं की पुस्तक है और वेद का पढ़ना

पढ़ाना व सुनना सुनाना सब आर्यों का परमधर्म है तथा सर्व सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उनका आदि मूल परमेश्वर है ।

इस प्रकार वेदों में वर्णित विभिन्न रोगों के रोकथाम तथा पर्यावरण को विशुद्ध करने के लिए हमें स्वयं अपनी वैज्ञानिक यज्ञ पद्धति का अध्ययन व अनुसंधान कर इन विभिन्न रोगों की विभीषिकाओं से बचना होगा । आईये ऋषियों व वेदों की इस यज्ञ पद्धति का वैज्ञानिक चिन्तन प्रस्तुत कर, रोगों की विभीषिका से समाज को निजात दिला सकें ।

### आयुर्वेदिक यज्ञ थेरेपी क्या है ?

यह एक विलक्षण सत्य है कि शरीर की क्रिया व्यापार को चलाने वाली रस-रक्त-स्नायु विहीन नाड़ियां होती हैं, जिसमें इससे भी सूक्ष्मतम प्राण चेतना प्रभावित होती है । यदि कोई ऐसी पद्धति हो जो स्नायु संस्थान को प्रभावित कर सके तो उसे आधुनिक इन्जेक्शन चिकित्सा को ही आजकल प्रमुखता से प्रतिलिपि तथा त्वरित लाभप्रद माना जा रहा है, परन्तु इससे भी कहीं अधिक सूक्ष्मतम वायु में मिश्रित होकर शरीर में पहुँचने वाली औषधि आयुर्वेदिक यज्ञ पद्धति अधिक कारगर हो सकती है ।

भारतीय आयुर्वेदाचार्यों जैसे धनवन्तरि-चरक-सुश्रुत-वाणभट्ट आदि ने यज्ञ पद्धति को चिकित्सा में श्रेष्ठ माना है । ऋषियों ने इसे आत्मोत्कर्ष का अमोघ साधन भी माना है । यदि इसकी गहराई में न जाकर भौतिक स्तर तक ही कल्पना करें तो यज्ञ चिकित्सा की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट सफल चिकित्सा कही जा सकती है ।

वंध्यत्व के निवारण से लेकर भयंकर असाध्य रोगों तथा वायरल वैक्टेरिया व संक्रमण रोगों के निवारण में यज्ञ का प्रयोग किया गया है । यज्ञ के माध्यम से भौतिक औषधि का गुण अत्यधिक सूक्ष्म बना दिया जाता है । यज्ञ का वैज्ञानिक आधार भी यही है कि अग्नि अपने में जलाई गई वस्तु को करोड़ों गुना अधिक सूक्ष्म बनाकर वायु में फैला देती है । एक छोटे से प्रयोग से हम इस तथ्य को और अधिक अनुभव कर सकते हैं कि एक लाल मिर्च उतनी तीखी नहीं होती है परन्तु उसे अग्नि में डालकर जलाया जाये तो उसका प्रभाव दूर दूर तक फैलता है ।

वैज्ञानिक स्तर पर अग्नि की सूक्ष्मीकरण सामर्थ्य फ्रांस के डॉ० हाफकिन तथा मद्रास के सेलेटरि कमिशनर डॉ० कर्नल किंग के प्रयोगों द्वारा प्रमाणित की है । उनका कहना है कि आग में धी जलाने से कोसों दूर तक के कीटामु निष्क्रिय हो जाते हैं, धी, चावल, केसर आदि के धुयें से विष का नाश होता है और वायु में धुले जहर वर्षा के साथ मिलकर जमीन में चले जाते हैं तथा खाद बन कर पृथ्वी की उर्वरा शक्ति बढ़ाते हैं ।

हवन से निकलने वाली गैसें कष्ट को रोकती हैं । शरीर के भीतर या बाहर जिन छोटे व बड़े जख्मों के कारण, पायरिया, कोलाईटिस, तपेदिक, दमा, संग्रहणी आदि रोगों के कीटाणुओं को नष्ट करने के लिये उपयोगी सिद्ध होती है । इसके अनेकों वैज्ञानिक प्रयोग किये जा चुके हैं । डॉ० फुन्दन लाल, प्रो० रामप्रकाश, चण्डीगढ़ तथा डॉ० सत्यप्रकाश सरस्वती जी इलाहाबाद आदि ने भी अनेकों प्रयोगों से प्रमाणित किया है ।

यज्ञ में स्वास्थ्य संवर्धन व रोग निवारण की अद्भुत शक्ति है। उसका कारण पदार्थों को वायुभूत बनाकर उसका लाभ होना है। इसमें वायुभूत बनी औषधियाँ जितना काम करती हैं उतना वे खाने या पीने से नहीं कर सकती हैं। भयंकर असाध्य रोगों के लिये वैज्ञानिक सिद्ध प्रयोग है कि औषधियों के साथ यदि उत्तम ऑक्सीजन मिश्रित वायु सेवन की सुविधा हो तो रोगों को नष्ट करने में अत्यधिक लाभ होगा और यदि वह वायु औषधि मिश्रित हो तो निःसन्देह उसका प्रभाव शरीर पर अधिक होगा।

प्राण वायु ऑक्सीजन भी एक औषधि है। प्रातःकाल जब वातावरण में ऑक्सीजन की मात्रा अधिक होती है तो टहलने जाना आरोग्य वर्धक माना जाता है, वायु में लाभप्रद तत्व मिलें तो उसकी उपयोगिता का लाभ अधिक मिलेगा। हवन या यज्ञ के द्वारा इसी प्रयोजन को पूरा करना है। उपयोगी स्वास्थ्य वर्धक औषधियों को वायु भूत बनाकर और उसका लाभ उस वातावरण के सम्पर्क में आने वाले को मिले तो आरोग्य की दृष्टि से यज्ञ का लाभ महत्वपूर्ण है।

शारीरिक रोगों के निवारण करने के अतिरिक्त यज्ञ वायु में मानसिक रोगों के निवारण की अपूर्व क्षमता है, भयंकर रोगों जैसे एड्स, स्वाइन फ्लू, वायरल, टाईफाइड, डेंगू, मलेरिया, प्लेग, टी०बी०, चर्मरोग, हृदयरोगों आदि में होने वाले शारीरिक कष्ट से उत्पन्न मनोविकारों से भी रोगी ग्रसित होकर दूसरों के लिए अनेकों समस्यायें उत्पन्न करते हैं, फलस्वरूप सनक, उद्वेग, आवेश, संदेह, कामुकता, अहंकार अविश्वास, निराशा, आलस्य, विस्मृति आदि अनेकों मनोविकारों से ऐसे रोगी उद्विग्न रहते हैं, कलह करते हैं और सम्बन्धित लोगों को खिन्न बनाये रखते हैं फलस्वरूप उनकी प्रगति रुक जाती है और अनेकों प्रकार की हानि उठानी पड़ती है।

इन सभी मनोविकारों की एकमात्र चिकित्सा यज्ञ है। हवन सामग्री की सुगन्ध के साथ-साथ दिव्य वेद मंत्रों के प्रभावशाली कम्पन मस्तिष्क के मर्म स्थानों को प्रभावित करते हैं। विशिष्ट सुगन्ध से कीटाणुओं का नाश होता है तथा यज्ञ के धुयों रूपी कार को विशिष्ट वेदमंत्र स्टेयरिंग का काम करते हैं। फलतः मनोविकारों के निवारण में यज्ञ का प्रभाव पड़ता है।

भारतीय संस्कृति के १६ संस्कारों में यज्ञ को अनिवार्य रूप से जोड़ा गया ताकि उसके प्रभाव से मनोविकारों की जड़ें कटती रहें। रोग निवारण व निरोधक गुणों के अतिरिक्त यज्ञ वायु में स्वास्थ्य संवर्धन का भी गुण है, जो पौष्टिक जीवनी की शक्ति बढ़ाने में भी सहायता करते हैं और अंग विशेष की शक्ति में आई कमी को भी पूरा करते हैं।

तात्पर्य है कि आयुर्वेदीय यज्ञ थेरेपी अर्थात् जड़ी बूटियाँ हिमालय की कंदराओं से प्राप्त लाभकारी औषधियाँ जब अग्नि के सम्पर्क में आकर वायु द्वारा शरीर के अंग प्रत्यंगों, नस नाड़ियों में सूक्ष्म सूक्ष्म रूप में शरीर में प्रवेश करती हैं तो कष्टकारक वायरस वैक्टेरिया आदि जीवाणुओं को निष्क्रिय करने का बल उत्पन्न हो जाता है। इस यांत्रिक वायु से जीवाणुओं का आक्रमण नहीं हो सकता है तथा स्वाइन फ्लू, डेंगू, मलेरिया, वायरल फीवर, प्लेग, टी०बी०, एड्स आदि के जीवाणु शरीर में श्वेत रक्त कणिकाओं (WBC) को नष्ट नहीं कर पाते जिससे शरीर की प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है।

## यज्ञ एवं यज्ञ में प्रयुक्त पदार्थों का रासायनिक वैज्ञानिक विश्लेषण

आयुर्वेदीय यज्ञ थैरेपी की अग्नि में किसी पदार्थ को डालते हैं तो उसका स्थूल रूप सूक्ष्म रूप में परिवर्तित हो जाता है। यजुर्वेद में घूरसि कह कर इसी सत्य को प्रतिपादित किया गया है। घूरसि का अर्थ करते हुए महर्षि दयानन्द ने लिखा है कि भौतिक अग्नि सब पदार्थों का छेदन व अन्धकार का नाश करने वाली है। भौतिक अग्नि इसलिए है कि उस होम दृव्यों को परमाणु रूप करके वायु व जल के साथ मिलकर शुद्ध करती है। दैनिक अनुभव की बात है कि — १. दाल में एक ग्राम हींग का प्रभाव नहीं होता है परन्तु उस हींग को भूनकर दाल में डालने पर सम्पूर्ण दाल को सुगन्धित कर देती है। २. मिर्च भौतिक रूप में खाये जाने पर उसका प्रभाव खाने वाले पर ही पड़ता है एवं उस मिर्च की भलीभांति पीसकर उड़ा देने से आस-पास में बैठे लोगों पर प्रभाव पड़ता है और वे व्यक्ति खांसने लगते हैं। परन्तु उसी मिर्च को अग्नि में जलाने से दूर दूर तक के लोगों पर उसकी तीक्ष्ण गंध का प्रभाव पड़ता है। यह तथ्य ग्राह्य के गैसीय व्यापनशील नियम (Graham's Law of Diffusion of Gases) पर आधित है। इस नियम के अनुसार निश्चित ताप व दाब पर गैसों की व्यापन गतियाँ उसके घनत्व के वर्गमूल के विपरीत अनुपाती होती है। अतः जो गैस जितनी हल्की होती, वह उतनी शीघ्र वायु में मिल सकेगी। ऐसा यजुर्वेद में भी कहा है : “स्वाहा कृतेऽऊर्ध्वनभ्रसं मासूतं गच्छतम्।”

अर्थात् यज्ञ में स्वाहा पूर्वक आहूति देने से वायु ऊपर आकाश में व्याप्त होती है। इससे स्पष्ट है कि अग्नि में डाला हुआ पदार्थ सूक्ष्म होकर वायु के साथ वातावरण में सभी जीव जन्तुओं में व्याप्त हो जाता है तथा दुर्गन्धि को दूर करता है। महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में लिखा है कि सुगन्धित वस्तुयें जैसे केसर, कस्तूरी, पुष्प, इत्र आदि में यह सामर्थ्य नहीं होती कि वायु को बाहर निकालकर शुद्ध वायु का प्रवेश करा सकें परन्तु यदि स्वास्थ्य वर्धक वनस्पतियाँ अग्नि में डाली जायें तो दुर्गन्धि युक्त पदार्थों को छिन्न भिन्न करके हल्का करके बाहर निकालकर पवित्र वायु को प्रवेश कराती है। इसके विपरीत इत्र पुष्पादि की सुगन्धि दुर्गन्धि युक्त वायु में मिल जाती है। उसको छिन्न-भिन्न करके दुर्गन्धि युक्त वायु को बाहर निकालने का साहस नहीं होता है, न ही ऊपर चढ़ सकता है क्योंकि उसमें हल्कापन नहीं होता है।

अतः स्पष्ट है कि वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर ही ऋषिमुनियों ने अग्निहोत्र को अपनाया था, इसलिये अग्निहोत्र में डाला गया पदार्थ सूक्ष्म होकर वातावरण के साथ शरीर में व्याप्त रोग उत्पन्न करने वाले वायरस वैक्टेरिया आदि जीवाणुओं की क्रियाशीलता को नष्ट कर देता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जाये कि जीवाणुओं को शरीर में श्वेत रक्त कणिकाओं पर आक्रमण करने से रोकते हैं तथा शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर बल प्रदान करते हैं जिससे शरीर में वायरस वैक्टेरिया आदि के जीवाणु शरीर से दूर भगाते हैं और स्वाइन फ्लू, डेंगू मलेरिया, वायरल फीवर, प्लेग आदि रोगों से शरीर की रक्षा होती है।

यज्ञ में डाले जाने वाले मुख्य पदार्थ जैसे कपूर, आम की संमिथा (लकड़ी), घृत, हवन सामग्री आदि होते हैं। इनको अग्नि में डालने पर उत्पन्न रासायनिक क्रिया क्या होती है, उसका विश्लेषण आवश्यक है —

१. कपूर :- कपूर आसानी से जलता है अतः यज्ञ को प्रज्जवलित करने के लिये कपूर का प्रयोग किया जाता है इसका कुछ भाग बिना किसी रासायनिक परिवर्तन के उड़ जाता है, जो वायु में मिलकर उत्तम सुगन्ध प्रदान करता है। कपूर जलने से वायु की दुर्गन्धि तो नष्ट नहीं होती परन्तु अपनी सुगन्ध से दुर्गन्धि को छिपा लेता है।

२. आम की समिधा (लकड़ी) :- अग्निहोत्र या यज्ञ में जो पदार्थ डालते हैं, उसका ७५ प्रतिशत भाग लकड़ी होती है, इसका प्रयोजन अग्नि को प्रज्जवलित करना या प्रज्जवलन को बनाये रखना होता है, अतः आवश्यकता से कहीं अधिक समिधा डालने से विशेष लाभ नहीं होता अपितु अग्नि प्रज्जवलित रहे यह महत्वपूर्ण है। लकड़ी के जलने से यज्ञकुण्ड में ५०० डिग्री सेल्सियस तापांश होता है।

लकड़ी के मुख्य भाग सेलुलोस तथा लिग्रो सेलुलोस में हाईड्रोजन ४७.६२ प्रतिशत कार्बन २८.५७ प्रतिशत तथा ऑक्सीजन २३.८१ प्रतिशत होती है। जब लकड़ी जलती है, तो सुलुलोस व लिग्रो सेलुलोस का ऑक्सीकरण होता है जिससे धीरे-धीरे हाईड्रोजन बनती है। यह ४००-६०० डिग्री सेल्सियस के बीच जल जाती है। सेलुलोस तथा लिग्रो सेलुलोस ऑक्सीजन के साथ मिलकर कार्बन डाई ऑक्साइड व पानी बनाती है। पानी भाप बनकर उड़ जाता है तथा कार्बन डाइ ऑक्साइड वायु में मिल जाती है। यदि वायु निकलने का प्रवेश द्वारा कम हो तो कुछ मात्रा में कार्बन मोनो ऑक्साइड का बन जाती है परन्तु यज्ञ वेदी खुले स्थान पर हो तो कार्बन मोनो आक्साइड का बनना अति न्यून होता है। कार्बन मोनो आक्साइड नहीं बननी चाहिए, इसलिए यज्ञ खुले स्थानों पर ही किया जाना चाहिए। यज्ञ कुंड की बनावट तथा समिधाओं की लम्बाई उसमें रखने की विधि तथा तापांश ही वायु की समुचित मात्रा देता है, जिससे कार्बन मोनो आक्साइड वायु में व्याप्त हो जाती है और कोई हानि नहीं होती।

यज्ञ के समय लकड़ी की आसवन क्रिया से अनेक पदार्थ पैदा होते हैं फिर यह पदार्थ आपस में मिलकर अन्य पदार्थ बना देते हैं। अनेकों वैज्ञानिकों प्रो० राम प्रकाश, डॉ० सत्य प्रकाश सरस्वती जी ने उत्पन्न होने वाले अनेकों पदार्थ पहचानने में सफल रहे परन्तु अभी तक प्राप्त अनुसंधानों के अनुसार लकड़ी से उत्पन्न होने वाली गैस या कोई पदार्थ शारीरिक दृष्टि से हानिकारक नहीं होता है, उन सबका मिश्रण स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद होता है। लकड़ी के जलने के बाद उसकी राख में कैलशियम, पोटेशियम, मैग्नेशियम तथा थोड़ी मात्रा में अल्यूमीनियम, लोहा, मैंगनीज, सोडियम, फास्फेट, गम्भक आदि विद्यमान होता है। जिसका प्रयोग खाद्य के रूप में उर्वरा शक्ति बढ़ाने में लाभप्रद होता है तथा वायरस, वैक्टेरियल रोगों में भी प्रयोग लक्षणों के अनुसार किया जा सकता है।

स्पष्ट है कि यज्ञ में लकड़ी जलती रहने चाहिए कम मात्रा में प्रयोग करनी चाहिये तथा इसके आसवन की क्रिया से उत्पन्न पदार्थ सम्मिलित रूप से स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद होते हैं।

३. घृत :- कपूर द्वारा अग्नि प्रज्जवलित करके समिधाओं पर घृत की आहूति प्रदान की जाती है, घृत अग्नि को प्रज्जवलित रखता है परन्तु इसका मात्र यह ही प्रयोजन नहीं है, अपितु विशेष रूप से गाय का घी ही प्रयोग करने पर लाभ करता है। अन्य किसी प्रकार का वनस्पति घी जलने से हानि

सम्भव हो सकती है। प्रसिद्ध चिकित्सक डा० कुन्दन लाल अग्निहोत्री, एम०डी० ने इस पर काफी अनुसंधान किया था उन्होंने सेनेटोरियम जबलपुर में अनेकों टी०बी० के रोगियों पर गाय के घी का प्रयोग यज्ञ चिकित्सा से टी०बी० के जीवाणु नष्ट करने में सफल हुये थे।

घृत ग्लिसराल व कोर्बेक्सिलिक अम्लों के मेल से बना है। घृत के जलने से जो सुगन्ध उत्पन्न होती है, उसका कारण कैप्रोनिक ऐल्डहाइड, नार्मल आप्टिलिक ऐल्डहाइड, नार्मल नानिलिक ऐल्डहाइड, वेलेकरिक ऐल्डहाइड तथा कई उड़नशील ऐल्डहाइड तथा वाष्पशील वसीय अम्ल होते हैं यह सभी वायु में मिल जाते हैं जिससे सर्वत्र सुगन्ध फैल जाती है। घृत के जो कण बिना जले वायु में उड़ जाते हैं, वे अतिसूक्ष्म होते हैं, वे यज्ञ से उत्पन्न होने वाली गैसों को स्वयं में लीन करके वायुमण्डल को अधिक समय तक पवित्र करते हैं।

स्पष्ट है कि यज्ञ में घृत का अत्यधिक महत्व है जो अपनी सुगन्ध से शरीर की क्रियाओं को स्वास्थ्यवर्धक एवं क्रियाशील बनाता है तथा प्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाता है व विभिन्न वायरस वैक्टेरिया आदि को भी शरीर में व्याप्त सुगन्ध से विभिन्न रोगों को आक्रमण करने से रोकता है।

**४. हवन सामग्री :-** जब अग्नि भली भाँति प्रज्जवलित हो जाती है तब प्राकृतिक बनौषधियों से निर्मित हवन सामग्री की आहुति अग्नि में दी जाती है, सामग्री में जो पदार्थ व वनौषधियाँ मिलाकर बनाई जाती है, उसके विभिन्न प्रकार के द्रव्यों का विस्तृत वैज्ञानिक वर्णन भाव प्रकाश निघण्टु आदि आयुर्वेद ग्रन्थों में प्रामाणिकता के आधार पर विद्यमान है, यह औषधि युक्त हवन सामग्री जब यज्ञकुण्ड की अग्नि में जलती है तो सूक्ष्म वायु में मिश्रित होकर शरीर के प्रमुख रस्तों के द्वारा शरीर में प्रवेश करती है, यही वायु वातावरण में व्याप्त विभिन्न वायरस वैक्टेरिया को निष्क्रिय करती है तथा शरीर में प्रवेश कर प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है व वायरस वैक्टेरिया के लक्षणों को बढ़ने नहीं देती है। विभिन्न प्रकार के वायरस वैक्टेरिया से उत्पन्न होने वाले भयंकर रोगों जैसे स्वाइन फ्लू, डेंगू, मलेरिया, वायरल फीवर, प्लेस, टी०बी०, एड्स एवं चर्मरोगों आदि को शरीर से निरोग करने में सहायक होते हैं।

हवन सामग्री में मिश्रित वनौषधियाँ इन रोगों को नष्ट कर देती हैं, जिससे Pleatlet Count कम नहीं हो पाते W.B.C. बढ़ जाते हैं।

इस प्रकार यज्ञ के रासायनिक विश्लेषण से स्पष्ट है कि यज्ञ थैरेपी जब कोई वस्तु अग्नि में प्रज्जवलित की जाती है तो उस पदार्थ के जलने से उसका नाश नहीं होता है अपितु केवल रूप बदल जाता है। वे पदार्थ सूक्ष्म हो जाते हैं जिसका सूक्ष्म आकार वायु में मिलने या फैलने से वातावरण में विचरण कर रहे वायरस, वैक्टेरिया आदि यज्ञ स्थान से दूर चले जाते हैं और शरीर में अपना संक्रमण नहीं कर पाते हैं, दूसरी ओर इन जीवाणुओं से संक्रमित शरीर में उत्पन्न स्वाइन फ्लू, डेंगू, मलेरिया, वायरल फीवर, प्लेग, टी०बी०, एड्स, चर्मरोग आदि रोगों के संक्रमण को दूर करते हैं, शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है व शरीर स्वस्थ होने लगता है।

क्रमशः...  
केला बाग, सावित्री सरन, बरेली, उत्तर प्रदेश  
क्रमशः...  
केला बाग, सावित्री सरन, बरेली, उत्तर प्रदेश

## उन्नति

– सत्येन्द्र सिंह आर्य

### सामान्य अवधारणा –

यह एक सामान्य मान्यता है कि साधारण विवेक वाला व्यक्ति भी अपनी और अपने पुत्रादिकों की उन्नति चाहता है। उन्नति के स्थूल अर्थ से तो सभी परिचित हैं। एक व्यक्ति दुबला पतला है, यदि वह व्यायाम और सन्तुलित आहार के द्वारा हृष्ट-पुष्ट (स्वस्थ) हो जाता है तो यह उन्नति है। जिसे ज्ञान नहीं है, यदि वह प्रयत्न करके ज्ञान प्राप्त कर लेता है तो यह उन्नति है और यदि धनहीन व्यक्ति प्रयत्न करके धन कमा लेता है और धनी बन जाता है तो यह उन्नति है। यदि अपरिचय के आवरण में जी रहा व्यक्ति कोई देश-भक्ति, जाति-सेवा आदि का अद्वितीय कार्य करके प्रसिद्धि प्राप्त कर लेता है तो समझो कि उसने उन्नति कर ली। छोटे पद से बड़े पद पर पहुंचने की प्रक्रिया का तो नाम ही उन्नति है। सरकार में, कार्यालयों में कार्यरत जनों की यह उन्नति प्रायः होती ही रहती है।

हमारी तो प्रार्थनाओं में भी उन्नति की आकांक्षा विद्यमान रहती है। यथा —

अस्तो मा सद्गमय  
तमसो मा ज्योतिर्गमय  
मृत्योर्मा अमृतम् गमय ॥

इस प्रार्थना का साधारण सा अर्थ है कि हम असत् से सत् की ओर चलें, अंधकार (अज्ञान) से प्रकाश (ज्ञान) की ओर चलें तथा मरणशीलता से अमरता की ओर अग्रसर हों। यह अनवरत उन्नति की आकांक्षा है और सब जन इस विषय में एकमत हैं।

### उन्नति का विशिष्ट अभिप्राय –

उन्नति का मूल भाव यह है कि मनुष्य की शारीरिक, मानसिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति हो। मनुष्य का निज जीवन उन्नति के पथ पर कैसे अग्रसर हो, पहले यही बात विचारणीय है। मनुष्य दो वस्तुओं का संघात (Combination) है—(१) शरीर और (२) आत्मा अर्थात् वह अदृश्य शक्ति जो शरीर का नियंत्रण करती है। जब यह शक्ति (सत्ता) शरीर को छोड़ देती है तो शरीर निष्पाण हो जाता है, मर जाता है। आत्मा के स्वाभाविक गुण ज्ञान और प्रयत्न हैं। शरीर में दो प्रकार की इन्द्रियां विद्यमान हैं—(१) ज्ञानेन्द्रिय, (२) कर्मेन्द्रिय। इनमें से ज्ञानेन्द्रिय आत्मा के ज्ञान गुण और कर्मेन्द्रिय उसके प्रयत्न गुण को सार्थकता प्रदान करने के लिए हैं। शरीर और उसके विभिन्न अवयव, बुद्धि, मन आदि आत्मा के साधन हैं। इन्हीं के माध्यम से आत्मा प्रयत्न करता है।

### शरीर का उपयोग –

बाह्य शरीर के साथ जब हम शरीर के भीतरी अवयवों पर दृष्टिपात करते हैं तो ज्ञात होता है कि जहां बाह्य शरीर इन्द्रियमय है और मनुष्य के इच्छित कार्यों के करने का साधन है, वहां उसके भीतरी अवयव—हृदय, फेफड़ा, यकृत आदि उसके शरीर में होने वाले अनिच्छित कर्मों के साधन हैं। जो कार्य

इराजा करके किए जाते हैं जैसे देखना, सुनना, खाना, पीना, बोलना आदि—उन्हें इन्द्रियों के द्वारा किए गए इच्छित कार्य कहते हैं और जो कार्य बिना इरादा किए शरीर के भीतर होते रहते हैं जैसे भोजन का पाचन-कार्य, रक्त का शोधन-परिभ्रमण आदि—ये शरीर के भीतरी अवयवों द्वारा सम्पादित किए गए अनिच्छित कार्य कहाते हैं। इनके लिए इच्छा करने की आवश्यकता नहीं पड़ती, ये स्वतः होते रहते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में व्यक्तिगत उन्नति का अर्थ है—

(१) शरीर के सब भीतरी और बाहरी अवयवों का पुष्ट होना।

(२) मन, बुद्धि, चित्त आदि समस्त अन्तःकरणों तथा आत्मा का शुद्ध और बलवान् होना। शरीर के महत्व को ध्यान में रखते हुए ही कहा गया है—

**शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।**

अर्थात् धर्म (कर्तव्य कर्म) करने के लिए शरीर प्रथम (आवश्यक) साधन है। अतः तन-मन का स्वस्थ और सामर्थ्यवान् होना आवश्यक है। इसलिए शारीरिक और मानसिक उन्नति के साधनों पर विचार करना समीचीन होगा।

### उन्नति के साधन —

(१) शारीरिक उन्नति के साधन व्यायाम और आसन-प्राणायाम हैं। इनमें व्यायाम में सभी प्रकार के आसन, खेलकूद, दण्ड, बैठक, प्रातःकाल भ्रमण, दौड़ आदि शामिल हैं और प्राणायाम में गहरे श्वास लेना, विधिवत् प्राणायाम करना और श्वास सम्बन्धी स्वास्थ्यवर्धक क्रियाएँ शामिल हैं।

(२) मानसिक और आत्मिक उन्नति के साधन हैं (१) यम (२) नियम (३) प्राणायाम (४) ईश्वरोपासना और (५) विद्याध्ययन आदि।

इन सब पर विस्तार से चर्चा करनी अपेक्षित है।

**साभार :- आदर्श विद्यार्थी जीवन**

(पृष्ठ २२ का शेषांश)

नहीं हो सकता है। यदि काशी के विद्वान् मुसलमानों को हिन्दू बनाने को स्वीकार कर लेते तो आज ऐसी कश्मीर की दशा न होती। महर्षि दयानन्द जाति कर्म से मानते थे उनकी मान्यता थी कि वैदिक धर्म के सिद्धान्तों को मानने वाले उसको वैदिक धर्म में दीक्षित किया जा सकता है। स्वामी जी ने स्वयं एक विधर्मी को शुद्ध करके वैदिक धर्म की दीक्षा सदियों से हिन्दू धर्म के बन्द द्वार को खोलने का क्रान्तिकारी कार्य किया था। आगे चलकर स्वामी श्रद्धानन्द ने लाखों भाईयों को जो हिन्दू धर्म को छोड़कर विधर्मी बन गये थे तथा जो विधर्मी हिन्दू धर्म में आना चाहते थे उनकी शुद्धी करके हिन्दू जाति में सम्मिलित कर लिया था। हिन्दू जाति को सशक्त बनाने की दिशा में यह महान् कार्य महर्षि दयानन्द जी के बहुमुखी प्रतिभा का द्योतक है। उन्होंने मानव जाति को सन्मार्ग में लाने का अभूतपूर्व महान् कार्य किया था। ऐसे महान् ऋषि महर्षि दयानन्द का ३० अक्टूबर दिन मंगलवार १८८३ में सायंकाल ५ बजे अजमेर नगरी में स्वामी जी का देहावसान हो गया और शिवरात्रि को विश्वभर की आर्यसमाजों में महर्षि दयानन्द वोध दिवस के रूप में मनाया जाता है।

गंगा प्रसाद उपाध्याय पुरस्कार समिति

इलाहाबाद

अप्रैल, २०१७

# क्रान्तिकारी महर्षि दयानन्द सरस्वती

— श्री राधेमोहन, प्रधान

१८वीं शताब्दी में सदियों से दासता में आबद्ध भारतीय एवं हिन्दू जाति स्वदेशाभिमान एवं धर्म को भूल चुके थे, धर्म के नाम पर शूद्र एवं परिगणित जातियों के साथ पशुओं से भी बद्तर व्यवहार करने में अपना गौरव समझती थी। मध्यकाल के हिन्दू धर्मचार्यों द्वारा स्त्रियों और शूद्रों को वेदादि धर्म शास्त्रों को पढ़ने पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया था। आठ नौ वर्षों की कन्याओं का विवाह गौरी और रोहिणी के समान समझा जाता था। परिणामस्वरूप बाल विधवाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही थी क्योंकि पुनर्विवाह वर्जित था हिन्दू धर्म और महापुरुषों के चरित्र पर विधर्मियों द्वारा निरन्तर आक्रमण हो रहे थे, जिसका प्रतिउत्तर देने में हिन्दू धर्मचार्य सर्वथा असमर्थ थे। मैकाले द्वारा शिक्षा नीति के कारण भारतीयता से वंचित काले अंग्रेज उत्पन्न हो रहे थे, ऐसी विषम परिस्थिति में गुजरात में मूलशंकर का १८२४ ई० में जन्म हुआ जो आगे चलकर महर्षि दयानन्द सरस्वती के नाम से विख्यात हुये। उनकी शिक्षा दीक्षा १८६० से १८६३ ई० तक मथुरा में प्रज्ञाचक्षु विरजानन्द सरस्वती से प्राचीन धर्म एवं स्वदेशाभिमान से प्रशिक्षित होने से कर्मक्षेत्र में प्राणपण से सचेष्ट हो गये, उन्होंने स्वधर्म और स्वदेश भक्ति का पुनर्जागरण करने के लिए १८७५ में आर्य समाज की स्थापना की। जिसके द्वारा देश भक्ति की भावना भरने का भगीरथ प्रयत्न किया। स्वराज्य शब्द का पहली बार कांग्रेस की स्थापना से दस वर्ष पूर्व स्वामी दयानन्द ने अपने आर्याभिविनय में स्वराज्य शब्द का उद्घोष किया था और अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में स्पष्ट लिखा था कि ‘‘माता पिता के समान पालन करने वाला विदेशी राज्य स्वदेशी राज्य के तुल्य नहीं हो सकता।’’ यह शब्द ही स्वदेशी आन्दोलन का जन्मदाता सिद्ध हुआ है। क्रान्तिकारी दयानन्द ने अपने शिष्य श्याम कृष्ण वर्मा को इंग्लैण्ड भेजा था उन्होंने वहां जाकर इण्डिया हाऊस की स्थापना की और भारत की स्वतंत्रता हेतु इण्डिया सोशियोलाजिस्ट नामक अखबार निकाला था और उनके सानिध्य में वीर सावरकर, सेनापति वापट आदि क्रान्तिकारियों को जन्म दिया और भारत में पंजाब केशरी लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द और स्वामी श्रद्धानन्द स्वराज्य आन्दोलन के अग्रणी हुए। स्वामी जी के प्रेरणा से राम प्रसाद बिस्मिल, सरदार भगत सिंह, राजगुरु सुखदेव, चन्द्रशेखर आजाद और असफाक उल्ला खाँ स्वाधीनता के बेदी पर बलिदान हो गये। उन दिनों आर्य समाज के उत्सवों पर धर्म के साथ आजादी के तराने गाये जाते थे। स्वाधीनता आन्दोलन में लगभग ९२ प्रतिशत आर्य समाजियों ने भाग लिया था ऐसा ही मौलाना हसरत मुहानी तथा पट्टभिसीतारमैया ने कांग्रेस के इतिहास में अंकित किया था ?

## जाति प्रथा -

स्वामी जी जन्मना जाति के विरोधी थे तथा शास्त्रों के अनुसार कर्मणा जाति का प्रतिपालन किया। स्वामी जी ने कहा था कि ‘‘जन्म से सभी शूद्र होते हैं और कर्मों के द्वारा ही ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य की संज्ञा होती है।’’ स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में लिखा था कि जो शूद्र कुल में

उत्पन्न होकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के सदृश्य गुण, कर्म और स्वभाव वाला हो तो वह शूद्र ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य हो जाये । स्वामी जी इस कथन से प्रेरित होकर अगणित शूद्र कुलोत्पन्न पुरुषों ने वेद और धर्मशास्त्रों को पढ़कर शास्त्री आचार्य बनकर गुरुकुलों के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुये । शूद्र कुलोत्पन्न भाईयों को रूढ़िगत परम्पराओं के फलस्वरूप जो उन्हें अछूत समझते थे उससे हिन्दू जाति की बहुत हानि हुई है । स्वामी जी से किसी ने प्रश्न किया कि ‘द्विज अपने हाथों से रसोई बनाकर के खाये व शूद्र के हाथ की बनायी खाये तो स्वामी जी ने उत्तर दिया कि शूद्र के हाथ की बनायी खाये क्योंकि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य स्त्री पुरुष विद्या पढ़ाने, राज्यपालन और पशुपालन, खेती और व्यापार कार्य में तत्पर रहें और शूद्र अर्थात् मूर्ख स्त्री व पुरुष पाकादि सेवा करें ।’

### **विवाह –**

ऋषि दयानन्द बाल विवाह के घोर विरोधी थे पौराणिक परम्परा के रूढ़िगत विचारों में कहा गया था कि दसवें वर्ष तक कन्या का विवाह न करके रजस्वला कन्या को माता-पिता और उसका बड़ा भाई देखे तो नरक में गिरते हैं, इन वचनों से बाल विवाह धड़ल्ले से होते थे और कितनी कन्यायें बाल्या अवस्था में ही पति की मृत्यु हो जाने पर विधवा हो जाती थीं । खेद की बात है ब्रह्म समाज के नेता केशव चन्द्र सेन ने अपनी चौदह वर्षीय पुत्री का विवाह महाराज कूचविहार के १६ वर्षीय सुपुत्र के साथ किया था और इस रूढ़ि परम्परा को तोड़ नहीं सके । स्वामी जी के अनुयायी हरदयाल शारदा ने बाल विवाह के विरोध में सरकार द्वारा शारदा बिल पास कराया था जिसके द्वारा बाल विवाह अपराध घोषित किया गया था । विवाह के सम्बन्ध में स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश के चौथे समुल्लास में लिखा है कि १६ वर्ष से २४ वर्ष तक कन्याये और २५ वर्ष से ४८ वर्ष तक पुरुष का विवाह होना उत्तम है और विवाह लड़का लड़की के अधीन होना चाहिए । जब स्त्री पुरुष विवाह करना चाहें तो विद्या, विनयशील, रूप, आय, बल, कुल, शरीर का परिमाण आदि यथायोग्य होना चाहिए । स्वामी जी के वचनानुसार जाति बंधन को तोड़कर गुण कर्मनुसार अपने बच्चों का विवाह किया था । हर्ष की बात है वर्तमान काल में उच्च शिक्षा प्राप्त युवक और युवतियाँ जाति बन्धन को तोड़कर गुण कर्मनुसार विवह करने लगे हैं । ये शुभ लक्षण हैं ।

### **हिन्दी भाषा –**

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी गुजराती होते हुए भी देश की एकता की दृष्टि से हिन्दी को सर्वोपरि मानते थे इसलिए आपने सत्यार्थ प्रकाश आदि ग्रन्थों को हिन्दी में ही लिखा जबकि लोकमान्य तिलक जी ने मराठी, रवीन्द्रनाथ टैगोर जी ने बंगला, गांधी जी ने गुजराती और नेहरू जी ने अंग्रेजी में अपने ग्रंथ लिखे थे और आर्य समाज के नियम में लिखा कि ‘प्रत्येक आर्य को संस्कृत व आर्य भाषा हिन्दी अवश्य जानना चाहिए ।’ उसी नियम को ध्यान में रखकर पंजाब में उटू भाषी होते हुए भी हिन्दी को अपनाया और देशभर में आर्य समाजों के सारे कार्य हिन्दी में ही सम्पादित होते रहे हैं । स्वामी जी ने हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने हेतु लाखों व्यक्तियों के हस्ताक्षर कराकर महारानी विक्टोरिया के पास भेजा था । स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरुकुल कांगड़ी, लाला लाजपत राय, महात्मा हंसराज ने डी० ए० वी० कॉलेज

की स्थापना की थी और सारे देश में आर्य समाज में आर्यकन्या पाठशालायें खोलकर हिन्दी भाषा के प्रचार में धर्म, संस्कृति और भाषा आदि को समुन्नत करने में अभूतपूर्व कार्य किया ।

**वेद और दयानन्द :** १८वीं शताब्दी में भारत में अंग्रेजी राज्य चरमसीमा पर था । १८११ ई० में लंदन के आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में कर्नल बाडन ने बाडन पीठ की स्थापना की थी और उसके प्रस्ताव में लिखा था कि मेरे इस उदारतापूर्ण उत्तरदान का विशेष उद्देश्य है कि संक्षिप्त में लिखे धर्म ग्रन्थों के अनुवाद कार्य को इस रूप में बढ़ाया जाये कि मेरे देशवासी भारत के आदिवासियों को ईसाई मत में शिक्षित करने के कार्य में अग्रसर हो सकें । मध्यकाल के आचार्यों ने स्कन्द स्वामी, वैकट, माधव, महिधर, उव्वट, सायणचार्य आदि ने वेदों का भाष्य किया, उनके भाष्य अश्लीलता, पशु हिंसा, जड़पूजा, आदि अनेक दोषों से भरे पड़े थे । महर्षि दयानन्द ने प्राचीन यास्क ऋषि के निरूक्त वच निघण्टु शब्दकोष के द्वारा जो वेदों का जो भाष्य किया वह सर्वोत्तम था । विदेशी विद्वानों द्वारा सायण आदि भाष्यकारों के आधार पर जो अंग्रेजी विद्वानों मैक्समूलर, विलशन, ग्रीफिथ और मैक डानल्ड आदि विद्वानों ने जो भाष्य किया वह बहुत दोषपूर्ण था । योगी अरविन्द और टी०एल० वासवानी आदि महात्माओं ने स्वामी जी के वेद भाष्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी । स्वामी जी से प्रभावित होकर मैक्समूलर ने लिखा था कि ‘‘मेरा निश्चित मत है कि मानव का यदि आप चाहे आर्य जाति का अध्ययन करने के लिए संसार में कोई ग्रंथ वेद से महत्वपूर्ण नहीं है ।’’ इतना ही नहीं उसने एक पुस्तक लिखी थी जिसका नाम हम भारत से क्या सीख सकते हैं इसी प्रकार वेद के विषय में नोबल पुरस्कार विजेता मेटरलिंक पादरी मोरिस फिलिप आदि पाश्चात्य विद्वानों ने स्वामी जी के वेद भाष्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है । स्वामी जी ने मनु के वाक्यों के अनुसार वेदों को धर्म का आदि मूल मानते थे । इतना ही नहीं स्वामी जी ने आर्य समाज के नियम में लिखा था कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है और वेद को पढ़ना पढ़ाना सब आर्यों का परम धर्म है ।

### शुद्धि आन्दोलन के प्रणेता –

आज भारत में विपुल संख्या में जो मुसलमान, ईसाई दृष्टिगोचर होते हैं वह अरब या योरप से नहीं आये थे बल्कि ऊँच नीच की भावना के कारण अन्धविश्वासों से लिप्त होकर शूद्रों को अछूत व अस्पृश्य कहकर धक्के मार मार कर मुसलमान बनने के लिए मजबूर कर दिया था । पादरियों द्वारा अंग्रेजी शिक्षा में अग्रणी माइकल मधुसूदन दत्त और संस्कृत के विद्वान् नीलकण्ठ शास्त्री अपने शिष्यों के साथ ईसाई मत में दीक्षित हो गये थे और यदि उस समय कोई अपने भूलों को स्वीकार करके पुनः हिन्दू धर्म में आना चाहते थे उसके लिए हिन्दू धर्म का द्वार सर्वथा के लिए बन्द था । लोकोक्ति है कि सम्राट अकबर चन्दन लगाता था, माला पहनता था । वह जब हिन्दू होने के लिए बीरवल से प्रस्ताव किया तो बीरवल ने एक गन्दी मिशाल देकर उसे हिन्दू होने के लिए मना कर दिया था । इसी प्रकार कश्मीर नरेश महाराज हरि सिंह से मुसलमानों ने हिन्दू होने की प्रार्थना की, तो महाराज ने काशी जाकर पंडितों से उसकी व्यवस्था मांगी तो पंडितों ने साफ कह दिया कि कोई मुसलमान हिन्दू धर्म में दीक्षित

(शेष पृष्ठ १९ पर)

# सत्यार्थ प्रकाश काव्य सुधा

## महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश का काव्यानुवाद

— पं० देवनारायण तिवारी ‘निर्भीक’

श्री पं० देवनारायण तिवारी — आर्य समाज के उपदेशक और विद्वान् कवि हैं, इनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिसमें ३ महाकाव्य हैं। पं० जी ने सत्यार्थ प्रकाश का छन्दबद्ध भावानुवाद किया है। आर्य समाज कलकत्ता ने इसे आर्य संसार मासिक पत्र में धारावाहिक रूप से प्रकाशित करने का निश्चय किया है।

यह प्रथम कड़ी आपके समक्ष है। — सम्पादक

### प्रथम समुल्लास की उपक्रमणिका

है ब्रह्म एक अलक्ष सत्ता, दृष्टि वह आता नहीं।  
 साक्षार उसका रूप कोई, वेद बतलाता नहीं॥  
 वह सर्वव्यापक एक-सा रहता चराचर जगत् में।  
 उसका निवास सदैव है प्रति ठौर नास्तिक-भगत में॥१॥

सबसे बड़ा औ शक्तिशाली, है वही राजा महा।  
 अपने नियम में जग चलाता, रच प्रलय करता महा॥  
 सबको बढ़ाता भी नियम से, पालता वह सृष्टि है।  
 उससे न कोई वस्तु ओझल, सर्वदर्शी दृष्टि है॥२॥

हैं कर्म-गुण उसके असंख्यों, नाम भी अगणित कहे।  
 उसकी सुभगतम छत्र छाया में सकल संसृति रहे॥  
 हर प्राणियों को ज्ञान देता योनि के अनुसार ही।  
 परमाणु से आकाश तक प्रतिक्षण चलाता है वही॥३॥

वह विश्वपति जग का प्रकाशक परम शोभावान है।  
 है पक्षपात रहित प्रभो, सर्वोच्च वह धनवान है॥  
 उसका दिया ही अन्न-जल अरु वायु का भण्डार है।  
 रवि चन्द्र का दाता वही, वह ब्रह्म परम उदार है॥४॥

होता न उसका कोष खाली, बाँटता है रात दिन ।  
 ऐश्वर्य उसका है अमित, विज्ञान भी सकता न गिन ॥  
 शशि, भानु, तारों से भरी संसृति सकल है चल रही ।  
 यह सृष्टि नित गतिशील रह उसकी विधा से पल रही ॥५॥

खद्योत से ले सूर्य तक में ज्योति भरता है वही ।  
 उसकी कृपा से दे रही अगणित पदार्थ सुदृढ़ मही ॥  
 प्यारा वही छविधाम देकर ज्योति नेत्र सँवारता ।  
 फल-फूल शोभावान रच, रचना समस्त निखारता ॥६॥

देकर खगों को पंख सुन्दर, तितलियों को दे छटा —  
 लहरा रहा है व्योम में भी, वह अनोखी धन घटा ॥  
 नित सिन्धु की उदाम लहरें चरण उसका धो रही ।  
 वर्षा - झड़ी - रिमझिम निरत अभिषेक उसका कर रहों ॥७॥

सुखधाम वह अभिराम अति उपमान उसका है नहीं ।  
 रचना अनेकों एक से करता विराजा सब कहीं ।  
 फिर भी नहीं विश्वास करते लोग दृढ़ उस पर अहा !  
 नित अन्ध इव हैं भटकते, तज वेद - शास्त्रों का कहा ॥८॥

कर कल्पना बे पैर - शिर की ढालते बहु रूप में ।  
 भरते अकारण दोष है, उस विश्व रूप अनूप में ॥  
 प्रति नाम के अनुसार गढ़कर मूर्तियाँ सब पूजते ।  
 तज सर्वव्यापक ब्रह्म को, जड़ वस्तुओं से जूझते ॥९॥

करते न शुद्ध उपासना एकान्त में धर ध्यान को ।  
 हैं दर - बदर नित धूमते औ खोजते भगवान को ॥  
 पर ब्रह्म की स्तुति न करते, प्रार्थना भाती नहीं ।  
 फिर गिड़गिड़ते और रोते, नीद शुभ आती नहीं ॥१०॥

रच सम्प्रदाय अनेक उसके नाम पर है झागड़ते ।  
 नाना तरह के भेद रचकर है परस्पर अकड़ते ॥  
 करते विरोध-विवाद निज-निज कल्पना अनुसार हैं ।  
 वैरी समझ एक-दूसरे को नित्य करते मार हैं ॥११॥

धन-शक्ति दोनों पूँकते पड़ व्यर्थ के बकवाद में ।  
सारा समय निज नष्ट करते ब्रह्म के अपवाद में ॥  
पाते न असली तत्व फिर भी जन्म जाता व्यर्थ है ।  
परब्रह्म के शुभ नाम पर होता महान् अनर्थ है ॥१२॥

बिन तथ्य जाने ही सदा उन्माद-सा रहता चढ़ा ।  
अन्धा अँधेरे में लखे क्यों चित्र कागज पर कढ़ा ॥  
भीतर भरा धन ध्वान्त, बाहर भी अँधेरा है घना ।  
कैसे लखे शुचि ब्रह्म को, नर मूढ़ मति चञ्चल मना ॥१३॥

चित में न ईश्वर - भक्ति है, बस मात्र वाञ्छिलास है ।  
विश्वास भी दृढ़ है नहीं, लेकिन मिलन की आस है ॥  
बस तर्क-जालों में उलझाकर जिन्दगी देता बिता ।  
जीवन चला सब शून्य जाता, अन्त में जलती चिता ॥१४॥

शनि, राहु, मङ्गल आदि सारे ग्रह सताते हैं इसे ।  
बहु भूत-प्रेत पिशाच डंसते, देव बहु भाते इसे ॥  
भाता न लेकिन ब्रह्म, झगड़े में पड़ा नित झाँखता ।  
सिर पटकता है यत्र-तत्र, विराट इसकी मूर्खता ॥१५॥

प्रति नाम का आशय समझ यदि ब्रह्म को आराधता ।  
तो प्राप्त होता दिव्य फल, दुःख द्वन्द्व सारा भागता ॥  
किसको धरें, छोड़ें किसे, शङ्का न जाती है घनी ।  
मिलता न सुख, बहु द्वन्द्व में, आशा विफल रहती बनी ॥१६॥

जंजाल-सा भर हृदय में, नूतन बवाल समेटता ।  
बहु भाँति नक्काशी भरी, बहु मूर्तियों को भेंटता ॥  
है कौन छोटा, औ बड़ा है कौन, फरियाता नहीं ।  
इस भाँति सबको पूजता, पर ब्रह्म को ध्याता नहीं ॥१७॥

जपता नहीं है नाम उसका, वह न आता चित्त में ।  
गुण-कर्म वाचक नाम रटता, स्वार्थ भर निज चित्त में ॥  
अद्वैत अथवा द्वैत है या है अनेक स्वरूप में ।  
रहता कहाँ किस ठौर, अनुसन्धान करता कूप में ॥१८॥

पाताल, पर्वत, सिन्धु, सरिता, वृक्ष, पाहन पाथ में —  
निश दिन भटकता मूढ़ बन ईश्वर न आता हाथ में ॥  
विश्वास होता ब्रह्म व्यापक विश्व में प्रति ठौर है —  
कोई न कण है रिक्त उससे और वह सिरमौर है ॥१९॥

वह अग्नि, विद्युत, वायु, सूरज, चन्द्र-सा शुभ धाम है ।  
ईशान है वह विश्व का, उसका सुभग सब काम है ॥  
आनन्द का वह स्रोत है वह अमृत है वह सोम है ।  
है नाम उसका “ओ३म्” प्यारा, वह रमा प्रति रोम है॥२०॥

हैं और सारे नाम गुणवाचक, सुखद सुखधाम के ।  
पर “ओ३म्” है निज नाम उसका, ब्रह्म पूर्ण निकाम के ॥  
इस हेतु ऋषिवर ने दया कर की सभी की व्याख्या ।  
जाने विवेद जन विमल मति निश्चय पढ़े यह व्याख्या॥२१॥

इस व्याख्या से ब्रह्म का विश्वास होगा हृदय में ।  
अन्तः मिले सुखधाम वह, व्यापक यहीं निज हृदय में ॥  
पूरी करे सब कामना वह औ मिले परधाम है ।  
निशदिन जपें अति प्रेम से शुभ ‘ओ३म्’ प्यारा नाम है॥२२॥

सौ नाम ईश्वर के लिखे ऋषि ने प्रथम अध्याय में ।  
ये नाम गुणवाचक सभी हैं, रुचि करें स्वाध्याय में ॥  
तब ज्ञात होगा भेद पूरा, मुख्य इनमें कौन है ।  
है “ओ३म्” ही सर्वोच्च जो आनन्द का शुभ भोग है ॥२३॥

सब व्याकरण के सूत्र से ऋषि ने बताया अर्थ है ।  
इनसे विरुद्ध विडम्बना है, कल्पना भी व्यर्थ है ॥  
अतएव इनको जान साधें सतत ईश्वर-साधना ।  
“निर्भीक” हो भवपार निश्चय, नित करें आराधना ॥२४॥

इति उपक्रमणिका

मो० ९८३०४२०४९६

# ‘हिंदी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है’

परीक्षित मंडल ‘प्रेमी’

उन्नीसवीं सदी के महान वेदार्थ क्रांत-दर्शी महर्षि दयानन्द सरस्वती का उपर्युक्त वचन बिलकुल सार्थक और स्वर्णिम सत्य से दीपित है। यथार्थ में राष्ट्रभाषा हिंदी राष्ट्रीय चिंतन-चेतना, चारुता और राष्ट्रीय अस्मिता की समर्थ वाहिका है। महर्षि दयानन्द सरस्वती के उत्तरवर्ती हिंदी के मनीषी चिंतक तथा मनस्वी विचारकों ने भी उद्घोषित किया है कि युग-युग से वंदनीया हिंदी हमारी सभ्यता—संस्कृति की लोकोन्नर महिमा की संपोषिका है। मद्रास के चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने कहा है कि ‘‘यदि भारतीय लोक कला, संस्कृति और राजनीति में एक रहना है तो इसका माध्यम हिंदी और नागरी का प्रचार आवश्यक है।’’ महाराष्ट्रियन मनीषी लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने मुक्तकंठ से घोषणा की है—‘‘राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्यभाषा से अधिक बलशाली कोई तत्व नहीं। मेरे विचार में हिंदी ही ऐसी भाषा है।’’ बंगाल के महामनीषी केशवचंद्र सेन ने भी कहा है कि ‘‘एक भाषा के बिना भारत में एकता नहीं हो सकती और वह भाषा हिंदी है।’’ कविगुरु रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकारते हुए लिखा है कि ‘‘उस भाषा को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए जो देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती हो अर्थात् हिंदी।’’ गुजराती भाषी महात्मागांधी ने कहा है कि ‘‘राष्ट्रभाषा की जगह एक हिंदी ही ले सकती है।’’ प्रजाप्रौढ़ और अनुभवी साहित्यकार महाकवि शंकर कुरुप ने कहा है कि ‘‘भारत की अखंडता और व्यक्तित्व बनाए रखने के लिए हिंदी का प्रचार अत्यंत आवश्यक है।’’ पुन श्रीमती इंदिरा गांधी की प्रखर उक्ति है कि ‘‘देश को एकता के सूत्र में आबद्ध करने की शक्ति केवल हिंदी में है।’’ वाग्देवी के पुण्यायतन के यशस्वी साहित्य साधक डॉ० संपूर्णनन्द ने मंत्रवाणी में ऊर्ध्वघोष किया है कि ‘‘अमर भारती की इस लाडली ‘‘हिंदी’’ के स्वरों में भारत की राष्ट्रीय आत्मा बोलती है।’’ राष्ट्रीय एकता और अखंडता के अनन्य पुरोधा लौह पुरुष सरदार बल्लभभाई पटेल ने तूर्यस्वर में घोषणा की है कि ‘‘हिंदी अब सारे भारत की राष्ट्रभाषा बन गई है। हमें उस पर गर्व होना चाहिए।’’ निःसंदेह हिंदी द्वारा ही एकता, अखंडता, पुनर्निर्माण तथा एकात्ममानववाद का समेकन और संस्थापन संभव है। इसका संपूर्ण वाङ्मय मानव को मानव से और उपस्थित वर्तमान को शेष काल—खंडों से जोड़ता है। यह व्यक्ति की विराट चिंतन-चेतना तथा विश्वमानवबोध की चारुता का विकास करती है। इससे सीमित संकीर्णता की दीवारें टूटती हैं।

क्रांत द्रष्टा महाप्राज्ञ मनीषियों के उपरि विवृत सप्राण मन्त्रव्यों तथा वक्तव्यों के विहंगावलोकन से यह स्पष्ट हो जाता है कि मातृभाषा, राष्ट्रभाषा, राजभाषा, संपर्कभाषा, जनभाषा हिंदी जीवन और जगत की मुख्य जीवन धारा, सामरस्य, सौमनस्य और रसानन्द के विभिन्न आयामों की मनोहारिणी भास्वरमयी भाषा है। इसमें समस्त भारतीय संस्कृति की व्यापक संचेतना का स्फुरण उपलब्ध होता है। यह सार्वभौम दृष्टि से संपन्न भारतीय सामासिक संस्कृति की ऊर्जस्वल महोदधि है। इसमें वैदिक काल से

(शेष पृष्ठ ९ पर)

## आर्य समाज कलकत्ता के प्रकाशन

**पुस्तक विक्रेता, आर्य संस्थाओं, उपदेशकों को ४० प्रतिशत की छूट दी जाती है।**

**पुस्तक का नाम**

१. युग निर्माता सत्यार्थ प्रकाश-सदर्भ दर्पण  
(ऐतिहासिक संदर्भ में सत्यार्थ प्रकाश की यात्रा का दस्तावेज)
२. स्वामी दयानन्द का राजनीति दर्शन  
(स्वामी दयानन्द के राजनीति दर्शन का समीक्षात्मक अध्ययन)
३. भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज की देन  
(उन्नीस उत्कृष्ट निबंधों का संग्रह)
४. त्रैतवाद का उद्घव और विकास  
(त्रैतवाद का उसके उद्घव और विकास के वैशिष्ट्य को स्पष्ट करने वाला दर्शन का शोधपूर्ण ग्रंथ)
५. उपनिषद् रहस्य  
(इश्वर के नैतिक और प्रश्न उपनिषदों की सारांगित व्याख्या)
६. श्री श्री दयानन्द चरित
७. महार्षि दयानन्द की देन (निबन्धों का संग्रह)
८. धर्मवीर पं० लेखराम
९. आनन्द संग्रह  
(स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज के उपदेशामृत)
१०. भाई परमानन्द  
(बलिदानी वंश के कुलदीपक की अमर कहानी)
११. धर्म का आदि स्रोत
१२. संकल्प सिद्धि  
(विचारों के संकल्प विकल्प का अनोखा चिन्तन)
१३. ज्योतिर्मय  
(श्रीयुत् टी. ए. वास्वानी द्वारा लिखित (Torch Bearer) )  
का हन्दी अनुवाद
१४. वेद-वैभव
१५. कर्मकाण्ड
१६. स्वतंत्रता संग्राम में आर्य समाज का योगदान
१७. आर्यसमाज कलकत्ता का इतिहास
१८. मेरे पिता
१९. वेद और स्वामी दयानन्द
२०. व्यतीत के यश की धरोहर  
(महासम्मेलनों के संस्मरणात्मक आकलन)
२१. Torch Bearer
२२. पं० गुरुदत्त लेखावली
२३. प्रार्थना प्रवचन
२४. सन्ध्यारहस्य एवं सन्ध्या अष्टांग योग
२५. बंगाल शास्त्रार्थ
२६. वेद में गोरक्षा या गोवध
२७. वेद रहस्य
२८. वेद वन्दन
२९. राज प्रजाधर्म प्रबोधभाष्य
३०. वेद-वीथिका

**लेखक/सम्पादक**

प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	मूल्य ७०.००
डॉ० लाल साहेब सिंह	५०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय द्वारा सम्पादित	१५.००
डॉ० योगेन्द्र कुमार शास्त्री	२०.००
महात्मा नारायण स्वामी "सरस्वती"	२०.००
श्री सत्यवस्थुदास	१०.००
आर्यसमाज कलकत्ता द्वारा प्रकाशित	३०.००
स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती	५०.००
वीतराग स्वामी सर्वदानन्दजी महाराज	२५.००
श्री बनारसी सिंह	१०.००
पं० गंगाप्रसाद जी	३०.००
स्वामी ज्ञानश्रम	३०.००
टी.ए.ल० वास्वानी	३०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१५०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१०.००
ले० सत्यप्रिय शास्त्री	५०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	८०.००
इन्द्र विद्यावाचस्पति	५०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	४०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	६०.००
टी० ए.ल० वास्वानी	३५.००
मुनिवर पं० गुरुदत्तजी 'विद्यार्थी'	२५.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	५०.००
प्रो० चमूपति एवं स्व० आत्मानन्द (एक जिल्द)	३०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	४०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	५.००
महात्मा नारायण स्वामी जी	३५.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१६०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	७०.००
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय	१६०.००

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल द्वारा प्रकाशित  
तथा एशोश्येटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित। मो. : ९८३०३७०४६३